

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 12: ध्रुव का प्रस्थान

21 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



वन में एक बालक को दिया वरदान अन्ततः पूर्ण होता है: एक तेजोमय दिव्य विमान में विराजमान, ध्रुव तारों तथा ऋषियों को पार करता हुआ भगवान् विष्णु के शाश्वत धाम की ओर उठ जाता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में, ध्रुव का शोक-जनित क्रोध उसके पितामह स्वयम्भुव मनु के परामर्श से कोमलता से शान्ति में बदल गया, और युवा राजा ने अपना क्रोध त्यागकर युद्ध से हाथ खींच लिया। यह द्वादश अध्याय ध्रुव की सम्पूर्ण कथा को उसकी तेजोमय परिपूर्ति तक ले आता है। ध्रुव का क्रोध

शान्त हुआ देख प्रसन्न होकर, धन के स्वामी कुबेर प्रकट होते हैं और उसे एक वरदान अर्पित करते हैं — और विनम्र राजा धन नहीं, बल्कि भगवान् की अविचल स्मृति माँगता है। फिर, एक दीर्घ तथा धर्ममय शासन के पश्चात्, ध्रुव अपना सिंहासन त्याग देता है और, अपने पार्थिव जीवन के अन्त में, एक तेजोमय दिव्य विमान में सशरीर भगवान् विष्णु के शाश्वत धाम को उठ जाता है — वह अविनाशी स्थान जो उसे वन में एक बालक के रूप में वचन दिया गया था। यह शुद्ध भक्ति के प्रतिफल का, उस कोमलता का जिसे स्वर्ग भी नहीं भुला सका, और उस जीवन के राजतिलक का अध्याय है जो पूर्णतः भगवान् को सौंपा गया।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 12 (द्वादश अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: कुबेर का वरदान तथा ध्रुव का विष्णु-धाम को प्रस्थान
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में (जिसमें कुबेर तथा भगवान् के पार्षदों के वचन उद्धृत हैं)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: ध्रुव का राज्य, तथा भगवान् विष्णु के धाम को प्रस्थान का मार्ग
- केन्द्रीय विषय: कुबेर का वरदान, ध्रुव का धर्ममय शासन, तथा उसका भगवान् के शाश्वत धाम को सशरीर प्रस्थान
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 1-52
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 11 ने बताया कि स्वायम्भुव मनु ऋषियों के साथ रणभूमि पर आकर ध्रुव को परामर्श दिया कि प्रतिशोध भक्त का मार्ग नहीं, कि समस्त प्राणी भगवान् की योजना के भीतर कर्म करते हैं, और कि केवल भक्ति ही अहंकार की ग्रन्थि काटती है। द्रवित होकर, ध्रुव ने अपना क्रोध त्याग दिया और पुद्ध बन्द कर दिया। यह द्वादश अध्याय उसी शान्ति के सुखद परिणाम से आरम्भ होता है, जब कुबेर, उन यक्षों के स्वामी जिनसे ध्रुव लड़ा था, क्रोध में नहीं बल्कि कृपा में आते हैं।

कुबेर का वरदान

धन के स्वामी कुबेर को शीघ्र ही यह समाचार मिला कि युवा राजा ने संहार त्याग दिया है और उसकी क्रोधाग्नि शान्त हो चुकी है। प्रसन्न होकर वे स्वयं वहाँ पहुँचे, यक्ष-किन्नर-चारणों की स्तुतियों से घिरे हुए, और हाथ जोड़कर खड़े ध्रुव को सम्बोधित किया।

मैत्रेय उवाच

ध्रुवं निवृत्तं प्रतिबुद्ध्य वैशसा-

दपेतमन्युं भगवान्धनेश्वरः ।

तत्रागतश्चारणयक्षकिन्नरैः

संस्तूयमानो न्यवदत्कृताञ्जलिम् ॥ १ ॥

*maitreya uvāca dhruvaṁ nivṛttaṁ pratibuddhya vaiśasād apeta-manyuṁ bhagavān
dhaneśvaraḥ tatrāgataś cāraṇa-yakṣa-kinnaraiḥ saṁstūyamāno nyavadat kṛtāñjalim*

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: यह जानकर कि ध्रुव संहार से लौट आया है और उसका क्रोध शान्त हो गया है, धन के स्वामी कुबेर वहाँ आए — चारणों, यक्षों तथा किन्नरों द्वारा स्तुत — और हाथ जोड़े खड़े ध्रुव से बोले। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 1)



युवा राजा का क्रोध शान्त हुआ देख प्रसन्न होकर, धन के स्वामी कुबेर दिव्य गायकों द्वारा स्तुत प्रकट होते हैं और ध्रुव को कोई भी अभिलषित वरदान माँगने का निमन्त्रण देते हैं (श्लोक 1-7)।

कुबेर ने ध्रुव की शत्रुता-त्याग की सराहना की: उन्होंने कहा कि न यक्ष और न कोई अन्य कभी सच्चे अर्थ में हन्ता या हत हैं, क्योंकि जन्म और मृत्यु का शासन केवल भगवान् के शाश्वत काल-स्वरूप के हाथ में है (श्लोक 3)। फिर उन्होंने समस्त विवाद की जड़ को उघाड़ा: देह के आधार पर स्वयं तथा दूसरे को पृथक् “मैं” और “तुम” मानना केवल अज्ञान है — स्वप्न में दिखने वाले दृश्यों के समान असत्य — और यही भ्रम आत्मा को जन्म-जन्मान्तर के चक्र में घुमाता रहता है।

अहं त्वमित्यपार्था धीरज्ञानात्पुरुषस्य हि ।

स्वाप्नीवाभात्यतद्भ्यानाद्यया बन्धविपर्ययौ ॥ ४ ॥

*aham tvam ity apārthā dhīr ajñānāt puruṣasya hi svāpnīvābhāty atad-dhyānād yayā bandha-
viparyayau*

अर्थ: “मैं यह देह हूँ, और तुम वह” — यह सोचना अज्ञान से उत्पन्न भ्रम है, ठीक वैसे ही असत्य जैसे स्वप्न में दिखने वाले दृश्य; और यही भ्रम आत्मा को जन्म-मृत्यु के चक्र में बाँधे रखता है। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 4)

कुबेर ने कहा कि इसका उपाय दार्शनिक चिन्तन नहीं अपितु सेवा है: हृदय को पूर्णतः उस एक भगवान् पर स्थिर करो, जिनकी अचिन्त्य शक्ति इस संसार को संचालित करती है, फिर भी वे स्वयं उससे अस्पृष्ट रहते हैं; केवल वे ही आत्मा को इस बन्धन से मुक्त कर सकते हैं (श्लोक 5-6)। इतने बुद्धिमान् श्रोता से प्रसन्न होकर, उन्होंने राजा को अपना अभिलषित वरदान माँगने को कहा।

ध्रुव केवल भगवान् को स्मरण रखने की याचना करता है

महाभागवत, बुद्धि में महान्, ने न धन माँगा, न राज्य, न दीर्घ आयु। राजाओं के राजा द्वारा अपनी अभिलाषा नाम करने को कहे जाने पर, ध्रुव ने केवल एक वस्तु माँगी — श्रीहरि की अविचल स्मृति, जिससे आत्मा अनायास ही संसार के दुरतिक्रम अन्धकार को पार कर जाती है।

मैत्रेय उवाच

स राजराजेन वराय चोदितो

ध्रुवो महाभागवतो महामतिः ।

हरौ स वव्रेऽचलितां स्मृतिं यया

तरत्ययत्नेन दुरत्ययं तमः ॥ ८ ॥

*maitreya uvāca sa rāja-rājena varāya codito dhruvo mahā-bhāgavato mahā-matiḥ harau sa
vavre 'calitām smṛtiṁ yayā taraty ayatnena duratyayaṁ tamaḥ*

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: राजाओं के राजा कुबेर द्वारा वरदान माँगने को प्रेरित, महाभागवत ध्रुव, बुद्धि में महान्, ने श्रीहरि की अविचल स्मृति माँगी, जिससे मनुष्य अनायास ही दुरतिक्रम अन्धकार को पार कर जाता है। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 8)



कोई भी उपहार अर्पित किए जाने पर, महाभागवत ध्रुव धन या राज्य नहीं बल्कि केवल एक वस्तु माँगता है — भगवान् की अविचल स्मृति, जिससे आत्मा संसार के अन्धकार को पार करती है (श्लोक 8)।

इतनी शुद्ध याचना से प्रसन्न होकर, कुबेर ने उसे प्रदान किया और अपने लोक को प्रस्थान किया। तब ध्रुव अपनी राजधानी लौटा और हज़ारों वर्ष पृथ्वी पर शासन किया, महान् यज्ञ करते हुए, समस्त प्राणियों में भगवान् का सम्मान करते हुए, और अपनी प्रजा पर न्याय तथा भक्ति से शासन करते हुए, सदा यह स्मरण रखते हुए कि यह जीवन क्षणभंगुर है और भगवान् ही एकमात्र लक्ष्य।

दिव्य विमान

जब उसका दीर्घ शासन पूर्ण हुआ और वह अपना राज्य अपने पुत्र को सौंपकर तपस्या के लिए बदरिकाश्रम में जा चुका था, तब उसके पास भगवान् के धाम से दो तेजोमय, चतुर्भुज पार्षद आए, दीप्तिमान् तथा कृपालु। उन्होंने राजा का प्रेम से अभिनन्दन किया और बताया कि परम भगवान् ने उसे बुलाया है — यह उत्तम दिव्य विमान, उन भगवान् द्वारा भेजा जो उत्तम श्लोकों से स्तुत सबके शिरोमणि हैं, उसे घर ले जाने आया है; और वह उस पर आरूढ़ होने योग्य है।

एतद्विमानप्रवरमुत्तमश्लोकमौलिना ।

उपस्थापितमायुष्मन्नधिरोढुं त्वमर्हसि ॥ २७ ॥

etad vimāna-pravaram uttamaśloka-maulinā upasthāpitam āyusmann adhiroḍhum tvam arhasi

अर्थ: (भगवान् के पार्षदों ने कहा:) हे दीर्घायु, यह उत्तम दिव्य विमान परम भगवान् द्वारा भेजा गया है, जो उत्तम श्लोकों से स्तुत सबके शिरोमणि हैं; तू इस पर आरूढ़ होने योग्य है। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 27)



भगवान् के दो तेजोमय चतुर्भुज पार्षद एक दीप्तिमान् दिव्य विमान में उतरते हैं और वृद्ध ध्रुव को उस पर आरूढ़ होकर विष्णु के धाम को लौट चलने का निमन्त्रण देते हैं (श्लोक 21-27)।

स्नान, पूजन तथा विदा लेकर, ध्रुव आरोहण के लिए तैयार हुआ। ठीक उसी क्षण साक्षात् मृत्यु उसके निकट आई, किन्तु निर्भय भक्त ने उसकी परवाह न करते हुए उसके मस्तक पर अपना पैर रख दिया और उस गृह-तुल्य दिव्य विमान पर आरूढ़ हो गया।

तदोत्तानपदः पुत्रो ददर्शान्तकमागतम् ।
मृत्योर्मूर्ध्नि पदं दत्त्वा आरुरोहाद्भुतं गृहम् ॥ ३० ॥

tadottānapadaḥ putro dadarśāntakam āgatam mṛtyor mūrdhni padaṁ dattvā ārurohādbhutaṁ gṛham

अर्थ: तब उत्तानपाद के पुत्र ने मृत्यु को निकट आते देखा; उसके शिर पर पैर रखकर, वह उस अद्भुत विमान पर, जो घर के समान विशाल था, आरूढ़ हो गया। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 30)

वह कोमलता जिसे स्वर्ग मिटा न सका

फिर भी, जैसे ही दिव्य विमान उठने को हुआ, ध्रुव ने अपनी माता सुनीति को स्मरण किया — वही जिसने पहले उसके आहत हृदय को भगवान् की ओर मोड़ा था। उसने मन में सोचा: वह दिव्य धाम को अकेले कैसे जाए और अपनी दीन, स्नेहमयी माता को पीछे कैसे छोड़ दे?

स च स्वर्लोकमारोक्ष्यन् सुनीतिं जननीं ध्रुवः ।
अन्वस्मरदगं हित्वा दीनां यास्ये त्रिविष्टपम् ॥ ३२ ॥

*sa ca svarlokam ārokṣyan sunītiṁ jananiṁ dhruvaḥ anvasmarad agam hitvā dīnāṁ yāsyē tri-
viṣṭapam*

अर्थ: जब वह उच्च लोक को आरूढ़ होने को था, ध्रुव ने अपनी माता सुनीति को स्मरण किया, यह सोचते हुए, “मैं अपनी दीन माता को छोड़कर दिव्य धाम को कैसे जाऊँ?” (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 32)



स्वर्ग की देहरी पर भी, ध्रुव अपनी माता सुनीति को स्मरण करता है, जिसने पहले उसका हृदय भगवान् की ओर मोड़ा था; भगवान् के पार्षद उसे आश्वस्त करते हैं कि वह उसके आगे अपने तेजोमय पथ पर जा रही है (श्लोक 32-33)।

उसका हृदय पढ़कर, भगवान् के पार्षदों ने उसे आश्वस्त किया: उसकी माता सुनीति उसी समय उसके आगे, अपने तेजोमय पथ पर, उसी शाश्वत धाम को जा रही थी। सान्त्वना पाकर, ध्रुव आरूढ़ हुआ।

अविनाशी धाम

तीनों लोकों को तथा सप्तर्षियों के लोक को भी पार करते हुए, दिव्य विमान द्वारा वहन किया गया, ध्रुव — वह अटल — अन्ततः भगवान् विष्णु के परम, अविनाशी धाम को पहुँचा, वह ध्रुव-स्थान जो समस्त तारों की परिक्रमा के बीच अमन्द चमकता है।

त्रिलोकीं देवयानेन सोऽतिव्रज्य मुनीनपि ।

परस्ताद्यद् ध्रुवगतिर्विष्णोः पदमथाभ्यगात् ॥ ३५ ॥

*tri-lokīṁ deva-yānena so 'tivrājya munīn api parastād yad dhruva-gatir viṣṇoḥ padam
athābhyagāt*

अर्थ: तीनों लोकों को तथा ऋषियों को भी उस दिव्य वाहन द्वारा पार करते हुए, ध्रुव, वह अटल, विष्णु के परम धाम को पहुँचा। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 35)

ध्रुव जब उस लोक की देहरी पर खड़ा था, मैत्रेय ने बताया कि वह धाम उसके लिए क्यों खुला।

यद्भ्राजमानं स्वरुचैव सर्वतो
लोकास्त्रयो ह्यनु विभ्राजन्त एते ।
यन्नाव्रजज्जन्तुषु येऽननुग्रहा
व्रजन्ति भद्राणि चरन्ति येऽनिशम् ॥ ३६ ॥

*yad bhrājamānaṁ sva-rucaiva sarvato lokās trayo hy anu vibhrājanta ete yan nāvrajañ jantuṣu
ye 'nanugrahā vrajanti bhadraṇi caranti ye 'niśam*

अर्थ: वह स्वयं-प्रकाशित धाम, जिसकी अपनी ही आभा से तीनों लोक आलोकित होते हैं, उस तक कभी नहीं पहुँचता जो अन्य प्राणियों पर करुणा नहीं करता; वहाँ केवल वे ही पहुँचते हैं जो निरन्तर समस्त जीवों के कल्याण में लगे रहते हैं। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 36)

कुबेर ने पहले ही ध्रुव को “मैं” और “तुम” को पृथक् तथा विरोधी मानने से सावधान किया था; यहाँ वही शिक्षा अपनी पूर्णता को पाती है। केवल वही आत्मा, जो इस भेद-बुद्धि से ऊपर उठ चुकी है — जो शान्त है, जो समस्त प्राणियों को समदृष्टि से देखती है, और जो सबके कल्याण में आनन्दित होती है — भगवान् के भक्तों की मैत्री में रहकर सहज ही उनके अविनाशी चरणों को पा सकती है (श्लोक 37)। ध्रुव का सिंहासन, उसके यज्ञ, यहाँ तक कि उसकी तपस्या भी इस यात्रा की सच्ची योग्यता नहीं थी; योग्यता तो वह करुणा थी जो उसने प्रत्येक प्राणी के प्रति धारण की।

ध्रुव की महिमा को दूर से देखते हुए, देवर्षि नारद — जो स्वयं उसके गुरु थे — अपनी वीणा उठाकर प्राचेतसों की सभा में अपने शिष्य की स्तुति में तीन श्लोक गाने लगे।

यः पञ्चवर्षो गुरुदारवाक्शरै-
भिन्नेन यातो हृदयेन दूयता ।
वनं मदादेशकरोऽजितं प्रभुं
जिगाय तद्भक्तगुणैः पराजितम् ॥ ४२ ॥

*yaḥ pañca-varṣo guru-dāra-vāk-śarair bhinnena yāto hṛdayena dūyatā vanaṁ mad-ādeśa-karo
'jitaṁ prabhuṁ jigāya tad-bhakta-guṇaiḥ parājitaṁ*

अर्थ: जो केवल पाँच वर्ष की अवस्था में, सौतेली माता के कटु वचनों से आहत हृदय लेकर वन गया, और वहाँ मेरे निर्देशन में, भक्तों को प्रिय उन्हीं गुणों से उस अजेय भगवान् को जीत लिया। (स्कन्ध 4, अध्याय 12, श्लोक 42)

नारद ने गाया कि केवल अपनी भक्ति के बल पर सुनीति-पुत्र ने वह पद पाया जिसे कर्मकाण्ड तथा शास्त्र में निपुण वेदवादी भी कभी नहीं पा सकते (श्लोक 41); उन्होंने आगे कहा कि कोई भी महान् राजा जीवन-भर की तपस्या से भी वह नहीं पाता जो इस बालक ने मात्र छह महीनों में पा लिया (श्लोक 43)। इसके पश्चात् मैत्रेय ने विदुर से अपनी कथा इस वचन के साथ समाप्त की कि जो कोई श्रद्धा से उस बालक की इस पावन कथा को सुनता है जिसने भक्ति से अविनाशी धाम जीता, वह स्वयं भक्ति पाता है, और समस्त पाप से मुक्त होता है।

इस प्रकार ध्रुव का लम्बा इतिहास, जो एक महल में एक बालक के आँसुओं में आरम्भ हुआ, घूमते आकाशों के उस अचल केन्द्र पर समाप्त होता है — एक आत्मा जो सदा के लिए भगवान् में स्थिर।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. शान्ति वह द्वार खोलती है जिसे युद्ध न खोल सका। जब ध्रुव ने अपना क्रोध त्यागा, कुबेर — उन्हीं का स्वामी जिनसे वह लड़ा था — उसके पास कृपा तथा आशीर्वाद में आए। मेल-मिलाप वह कृपा खींच लाता है जो संघर्ष कभी नहीं खींच सकता (श्लोक 1)।
2. “मैं” और “तुम” के पीछे केवल भगवान् हैं। कुबेर ने सिखाया कि देह के आधार पर स्वयं तथा दूसरे को पृथक् मानना ही वह अज्ञान है जो आत्मा को जन्म-मृत्यु में बाँधता है; केवल उस एक भगवान् की शरण ही इस ग्रन्थि को काटती है (श्लोक 4)।
3. भगवान् माँगो, उनके उपहार नहीं। कोई भी वरदान अर्पित किए जाने पर, ध्रुव ने केवल भगवान् की अविचल स्मृति माँगी। सबसे बुद्धिमान् प्रार्थना संसार की वस्तुएँ नहीं, बल्कि उस एक को माँगती है जो उससे परे है (श्लोक 8)।
4. भक्ति मृत्यु के समक्ष निर्भय है। ध्रुव ने स्वयं मृत्यु के शिर पर पैर रखा। जिसका हृदय भगवान् में स्थिर है, उसके लिए मृत्यु भी आतंक नहीं बल्कि एक देहरी है (श्लोक 30)।
5. शुद्ध प्रेम अपने ऋण नहीं भूलता। स्वर्ग के ठीक द्वार पर, ध्रुव उस माता को स्मरण करता है जिसने पहले उसे भगवान् की ओर मोड़ा। सर्वोच्च प्राप्ति हृदय को कठोर नहीं करती; वह उसे कोमल रखती है (श्लोक 32)।
6. योग्यता नहीं, करुणा वैकुण्ठ का द्वार खोलती है। स्वयं-प्रकाशित धाम विद्वान्, शक्तिशाली, यहाँ तक कि मुक्त-कामी के लिए भी बन्द है, और खुलता है केवल उस आत्मा के लिए जो प्रत्येक जीव के प्रति करुणामय है (श्लोक 36-37)।
7. भक्ति वह जीतती है जो और कुछ नहीं जीत सकता। छह महीनों में, एक पाँच वर्ष के बालक ने वह पा लिया जो जीवन-भर के कर्मकाण्ड तथा विद्या से भी नहीं मिलता; नारद ने गाया कि भक्ति ही उस भगवान् को जीतती है जिसे कोई नहीं जीत सकता (श्लोक 42)।
8. भगवान् का वचन कभी नहीं टूटता। वन में एक बालक को दिखाया गया अविनाशी धाम वही धाम है जिसे वह अब पाता है। भगवान् जो देते हैं, उसे अन्त तक पूर्ण करते हैं (श्लोक 35)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के समस्त आश्चर्यों में — कुबेर का आशीर्वाद, दिव्य विमान, मृत्यु के शिर पर पैर, तारों के पार आरोहण — जो सबसे अधिक ठहरता है वह सबसे छोटा है: कि शाश्वत धाम की देहरी पर, स्वर्ग की स्वयं प्रतीक्षा के साथ, ध्रुव रुककर अपनी माता को स्मरण करता है। शास्त्र के लिए सहज होता कि वह उसे अमिश्रित महिमा में उठने देता। इसके स्थान पर वह हमें एक ऐसा सन्त दिखाता है जो इतना महान् है कि मृत्यु पर पैर रख सकता है, और एक ऐसा पुत्र जो इतना कोमल है कि अपनी माता को पीछे छोड़ नहीं सह सकता। यही सच्ची भक्ति का स्वरूप है: वह प्रेम को मिटाती नहीं बल्कि उसे पूर्ण करती है। वही ध्रुव जो संसार से भगवान् की स्मृति के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता था, वही है जिसका स्वर्ग के द्वार पर पहला विचार उस स्त्री का है जिसने कभी उसके आँसू पोंछे और उसे भगवान् की ओर संकेत किया। उसकी कथा हमें बताती है कि सर्वोच्च का मार्ग हृदय की कठोरता से नहीं बल्कि उसकी गहनता से है — कि जो आत्मा भगवान् से प्रेम करना सीखती है, वह उसी प्रेम में, प्रत्येक पूर्व प्रेम को अधिक निष्ठा से धारण करना और उसे घर ले जाना सीखती है।

एक दैनिक भाक्ते-अभ्यास

आज, ध्रुव के वरदान को अपनी प्रार्थना बनाएँ। आपके हाथ चाहे कितने भरे या रिक्त लगें, भगवान् से वही एक उपहार माँगें जो ध्रुव ने माँगा — इस या उस परिणाम के लिए नहीं, बल्कि केवल *अविचल स्मृति* की कृपा के लिए, कि आप दिन की चिन्ताओं के बीच उन्हें न भूलें। शान्त बैठें, “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय” का जप करें, और वह एक याचना अर्पित करें: *मुझे आपका स्मरण रहे।* और स्वर्ग-द्वार पर ध्रुव की भावना में, कृतज्ञता से, उस एक व्यक्ति को स्मरण करें जिसने पहले आपके अपने हृदय को पवित्र की ओर मोड़ा — कोई माता-पिता, कोई गुरु, कोई मित्र — और उनके लिए एक प्रार्थना अर्पित करें। भगवान् को स्मरण रखने की याचना में, और उन्हें प्रेम से स्मरण करने में जिन्होंने आपको उनकी ओर ले गए, आप ध्रुव के मार्ग पर महल से ध्रुव-तारे तक चलते हैं।

उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का यह अध्याय ध्रुव की दीर्घ गाथा को उसके तेजस्वी अन्त तक पहुँचाता है। उसका क्रोध शान्त होते ही धनाध्यक्ष कुबेर स्वयं उसके समक्ष उपस्थित होकर कोई भी वर माँगने का निमन्त्रण देते हैं; किन्तु विनम्र राजा संसार की कोई वस्तु नहीं, केवल भगवान् की अटूट स्मृति चुनता है। एक दीर्घ तथा धर्ममय शासन के पश्चात्, ध्रुव तपस्या के लिए निवृत्त होता है, और वहाँ भगवान् के अपने तेजोमय पार्षद एक दिव्य विमान लेकर उसे घर ले जाने आते हैं। मृत्यु की चिन्ता न करते हुए, वह उसके शिर पर पैर रखता है और उस अद्भुत वाहन पर आरूढ़ होता है; फिर भी स्वर्ग की देहरी पर वह रुकता है, अपनी माता सुनीति को स्मरण करते हुए, और आश्चर्य किया जाता है कि वह उसके आगे जा रही है। तीनों लोकों तथा सप्तर्षियों को पार करते हुए, ध्रुव विष्णु के अविनाशी धाम को पहुँचता है — वही स्थान जो उसे बालक के रूप में वचन दिया गया था। नारद उसकी महिमा गाते हैं, और मैत्रेय वचन देते हैं कि जो कोई इस कथा को श्रद्धा से सुनता है वह भक्ति पाता है और पाप से मुक्त होता है। इस प्रकार वह बालक जो आँसुओं में आरम्भ हुआ, घूमते आकाशों के अचल केन्द्र पर सदा के लिए स्थिर हो जाता है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, *श्रीमद्भागवत महापुराण* (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, द्वादश अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-12-kuberas-boon-and-dhruvas-ascent-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

